International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(3): 245-250

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(3): 245-250
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-03-2017
Accepted: 02-04-2017

Dr. Tripti Sharma
Assistant Professor, Hindu Girls College, Sonipat, Haryana, India

Correspondence
Dr. Tripti Sharma
Assistant Professor, Hindu Girls College, Sonipat, Haryana, India

धर्म एवं वैश्विक धर्म मानवतावाद

Dr. Tripti Sharma

प्रस्तावना

'मानवतावाद' वह विचारधारा है, जो मानव तथा उसकी समस्याओं को सर्वाधिक महत्त्व देता है। मानवतावाद न तो किसी अतीन्द्रिय–सत्ता में विश्वास करता है और न इस जगत् से पृथक परलोक के अस्तित्व में। मानवतावाद के अनुसार ईश्वर, आत्मा, मोक्ष, स्वर्ग, नरक, देवी, देवता आदि सभी काल्पनिक विचार मात्र है, जिसका कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। वेद प्रकाश शर्मा के शब्दों में – "यह मूलत: मानव–केन्द्रित दर्शन है जो अलौकिक या अतिप्राकृतिक शक्तियों के स्थान पर स्वयं मनुष्य के अनुभव एवं उसकी तर्कबुद्धि को ही सर्वाधिक महत्व देता है एवं मानव–जाति के भाग्य के निर्माण के लिए केवल मनुष्य को ही उत्तरदायी मानता है।"[1] विचारणीय तथ्य यह है कि 'मानवता' स्वयं में एक मूल्य है। विश्व के सभी धर्म इस मूल्य के संरक्षण की बात करते हैं। दोनों में समानताएँ हैं फिर भी दोनों को हम एक नहीं मान सकते। क्योंकि सामान्य प्रचलित अर्थ में प्रत्येक धर्म अपने से उच्च किसी अगोचर सत्ता में विश्वास करता है, इसके बिना धर्म के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते।" धर्म विश्वासों, मूल्यों, आचरण के नियमों और कर्मकाण्डों की एक व्यवस्था है, जो आस्था पर आधारित रहती है, और जिसका झुकाव "परलोक" या "मृत्यु के बाद जीवन" की ओर रहता है।"[2]

वेद प्रकाश वर्मा अपनी पुस्तक 'धर्म–दर्शन की मूल समस्याएँ' में 'धर्म' को बहुत ही सुंदर ढंग से परिभाषित किया है – "धर्म मानव–जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करने वाली वह व्यापक अभिवृत्ति है जो सर्वाधिक मूल्यवान, पवित्र, सर्वज्ञ तथा शक्तिशाली समझे जाने वाले आदर्श और अलौकिक उपास्य विषय के प्रति अखंड आस्था एवं पूर्ण प्रतिबद्धता के फलस्वरूप उत्पन्न होती है और जो मनुष्य के दैनिक आचरण तथा प्रार्थना, पूजा–पाठ, जप–तप आदि बाह्य कर्मकांड में अभिव्यक्त होती है।"[3] इस प्रकार स्पष्ट होता है

कि 'धर्म' में एक अदृश्य, सत्ता में विश्वास किया जाता है। उस सत्ता पर व्यक्ति आश्रित हो जाता है तथा उससे संवेगात्मक संबंध जोड़ लेता है। वह ऐसा विश्वास कर लेता है, कि वह सत्ता सर्वोच्च, न्यायी एवं दयालू है। वह उसकी सहायता करेगी। वह अपने आप को ईश्वर के अधीन समझता है। वह यह मान लेता है कि हमारा भाग्य भगवान ने बनाया है हम इसमें कुछ परिवर्तन नहीं कर सकते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से यह परिलक्षित होता है कि अलौकिक शक्ति में आस्था धर्म का अनिवार्य रूप मूल तत्त्व है। जबकि मानवतावाद किसी भी अलौकिक शक्ति को नहीं मानता है। 'आक्सफोर्ड डिक्शनरी' के अनुसार, 'मानवतावाद ईश्वर से संबंधित न होकर मनुष्य के हितों से संबंधित है।' इसी प्रकार बाल्डविन की 'डिक्शनरी आफ फिलॉसफी एंड साइकॉलॉजी' में भी मानवतावाद की परिभाषाा दी गयी है – 'यह विचार, विश्वास अथवा कर्म संबंधी वह पद्धति है जो ईश्वर का परित्याग करके मनुष्य तथा सांसारिक वस्तुओं पर ही केन्द्रित रहती है।'

मानवतावाद की इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि विश्व में मानव का स्थान ही सर्वोपरि है। जबकि धर्मों में मनुष्य के अतिरिक्त सर्वोपरि स्थान अतीन्द्रिय सत्ता को दिया जाता है तथा मोक्ष जैसी परिकल्पना में मनुष्य को व्यस्त रखा जाता है। मनुष्य की पूर्णता ईश्वर जैसी सत्ता के हाथ में रहती है। अत: मनुष्य गौण हो जाता है और उसके स्थान पर ईश्वर तथा अन्य देवी–देवता पूज्य माने जाते हैं। ऐसी दशा में मनुष्य की गरिमा स्थापित करने के लिए मानवतावाद का आगमन होता है। यह मनुष्य को एक ऐसे प्राणी के रूप में स्वीकार करता है जो बिना किसी अलौकिक शक्ति की सहायता के सारी समस्याओं के समाधान में सक्षम है। मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है, अत: अपने सुख का निर्माण अथवा विनाश स्वयं उसी पर निर्भर करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानवतावाद धर्म के विरुद्ध एक चुनौती है।

मानवतावाद एक अति प्राचीन विचारधारा है। इसका एक लंबा इतिहास है। प्रत्येक काल और देश में मानवतावाद के अलग–अलग रूप हमें देखने को मिलते हैं। अत: मानवतावाद का सही–सही अर्थ जानने के लिए इसके विभिन्न रूपों पर चर्चा करना आवश्यक है। मानवतावाद के प्रमुख प्रकार :

1. धर्माश्रित मानवतावाद,
2. धर्मविरोधी मानवतावाद,
3. निरीश्वरवादी मानवतावाद,
4. प्रकृतिवादी मानवतावाद,
5. वैज्ञानिक मानवतावाद,
6. नव– मानवतावाद,

1. धर्माश्रित मानवतावाद

धर्माश्रित मानवतावाद मानव –कल्याण के लिए धर्म को बाधक न मानकर साधक मानता है। स्पष्ट कहा जाए तो धर्माश्रित मानवतावाद 'मानव–सेवा' के साथ–साथ 'अलौकिक सत्ता' में भी अटूट विश्वास रखता है क्योंकि धर्माश्रित मानवतावाद का मानना है कि ईश्वर की सहायता प्राप्त करके ही मानव अपने हितों का संरक्षण कर सकता है। यहाँ मनुष्य को भौतिक सुखों के उपभोग को त्याग करने पर अधिक जोर दिया गया है। जी.बी. फास्टर का मत है – "यद्यपि मानवहित में संवर्धन मनुष्य–जीवन का चरम लक्ष्य है, किन्तु मनुष्य की दशा इतनी गिरी हुई कि बिना ईश्वरीय प्रेरणा के न तो वह अपना हित समझ सकता है और न अपना विकास कर सकता है।"[4] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि धर्माश्रित मानवतावाद धर्म को मानव उन्नति में सहायक मानता है।

2. धर्मविरोधी मानवतावाद

धर्मविरोधी मानवतावाद को धर्म–निरपेक्षतावाद भी कहा जाता है, क्योंकि यह धर्म से तटस्थ रहता है। ईश्वर और पारलौकिक जगत का इसमें कोई स्थान

नहीं है। यह केवल मानव के ऐहिक, सुख और हित का समर्थक है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ईश्वर तथा धर्म–विरोधी है।

14वीं–15वीं सदी के लगभग मानवतावाद का नारा लगाया गया। परंतु उस समय धर्मों का विरोध नहीं किया गया था, बल्कि शांति और सुरक्षा के लिए धार्मिक सहिष्णुता पर जोर दिया गया। धर्मविरोधी मानवतावाद उग्र रूप में सन् 1933 के मई महीने के घोषणा–पत्र से प्रारंभ होता है। यह वह समय था जब बेरोजगारी और मंदी से यूरोप एवं अमेरिका की व्यवसायिक, औद्योगिक आदि सभी आर्थिक व्यवस्थाएँ चरमरा गयी थीं। वहाँ जनता ने ईश्वर से प्रार्थना की हमारी सहायता करो, परंतु ईश्वर की ओर से कोई सहयोग नहीं मिला। उस समय कुछ धर्म विचारकों तथा अनुभववादियों को यह बोध हुआ कि ईश्वर मानव की सहायता नहीं कर सकता, मानव स्वयं उसकी सहायता करके अपना उत्थान कर सकता है। इसके संबंध में जो घोषणा–पत्र जारी किया गया था उसे संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है –

1. आधुनिक विज्ञान के युग में ब्रह्मांड का जो स्वरूप है, उसमें किसी दैवी सत्ता का स्थान नहीं है।
2. धर्म अपनी योजनाओं को विज्ञान के आलोक में प्रस्तुत करें।
3. धर्म वह है जो मानव आवश्यकताओं की पूर्ति करे। कोई भी वस्तु त्याज्य नहीं है।
   वास्तविक धर्म में श्रम, कला, दर्शन, विज्ञान, मनोरंजन, मैत्री सभी समाहित हैं अर्थात् मानव जीवन को संतोष देने वाली सभी वस्तुएँ धर्म में निहित है। मानवतावाद ऐसा ही विश्व धर्म है जो मनुष्य के लिए उपयोगी तथा संतोषप्रद है।
4. मानवतावाद का उद्देश्य स्वतंत्र तथा विश्वव्यापी समाज की स्थापना करना है; जिसमें सभी सहयोग तथा मित्रतापूर्वक रह सकें।"[5]

3. निरीश्वरवादी मानवतावाद

निरीश्वरवादी मानवतावाद के प्रमुख उदाहरण बौद्ध–धर्म और कन्फ्यूशियस धर्म है। बौद्ध–धर्म ईश्वर की सत्ता और आत्मा की अमरता का निषेध करते हुए मनुष्य के कल्याण को सर्वाधिक महत्व देता है। इसके द्वारा वर्णित दु:ख– निरोध के अष्टांगिक मार्ग का उद्देश्य इसी संसार में मानव का कल्याण है। यह अष्टांगिक मार्ग मानव–कल्याण के लिए जीवन के सभी क्षेत्रों में आचरण की पवित्रता का अनिवार्य मानता है। इस प्रकार बौद्ध–धर्म ने अलौकिक शक्तियों में विश्वास तथा धार्मिक कर्मकाण्ड का खंडन करके मनुष्य को आत्म–निर्भर बनने का उपदेश दिया है,जो मानवतावाद के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

महात्मा बुद्ध की प्रसिद्ध उक्ति है :– 'अप्पा दीपो भव:' अर्थात् 'अपना प्रकाश तुम स्वयं बनो'। बुद्ध के अनुसार मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिए यही एकमात्र सही मार्ग है। बुद्ध "सर्वत्र अपनी शिक्षाओं और उपदेशों के माध्यम से मनुष्यों को सचेत करते रहे कि अपने भाग्य के निर्माण का शत–प्रतिशत दायित्व स्वयं मनुष्य पर ही हे, किसी ईश्वर या देवी, देवता पर नहीं।"[6] इससे स्पष्ट होता है कि मनुष्य अपने कर्मों के द्वारा अपनी किस्मत उज्ज्वल बना सकता है।

गौतम बुद्ध के समान ही चीन के महान विचारक कन्फ्यूशियस भी परलोक के स्थान पर इसी संसार में मनुष्य के कल्याण को सर्वाधिक महत्व देते हैं और इसके लिए उसके आचरण की पवित्रता को बहुत आवश्यक मानते हैं। उन्होंने भी मनुष्य को काल्पनिक दैवी शक्तियों पर निर्भर न रह कर स्वयं ही अपना तथा संपूर्ण समाज का कल्याण करने के लिए प्रोत्साहित किया है। इसी प्रकार यूनानी दार्शनिक प्रोटागोरस ने मनुष्य तथा उसकी समस्याओं को अपने दर्शन का प्रमुख केन्द्र माना है। इसका प्रसिद्ध कथन है 'Man is the Measure of all things.' अर्थात् ' मनुष्य ही सभी वस्तुओं का मापदण्ड है।' अलौकिक सत्ता के बारे में इन्होंने

स्पष्टत: कहा है कि इनका ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि इन्हें जानने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं है। प्रोटोगोरस के इन्हीं विचारों के कारण उन्हें धर्मद्रोही कहकर देश से निकाल दिया गया था तथा इनके समस्त कृत्तियों को एकत्रित करके जला दिया गया है। प्रोटागोरस की भाँति सोफिस्ट ने भी मानवतावादी विचार का समर्थन किया है। सुकरात का प्रिय वाक्य – 'अपने को जानो' मानवतावाद का समर्थक है।

4. प्रकृतिवादी मानवतावाद

प्रकृतिवादी मानवतावाद, मानवतावाद के अन्य सभी मतों की अपेक्षा अधिक प्रसिद्ध हुआ है। डार्विन के विकासवादी सिद्धांत के आधार पर मानव को प्रकृति के विकास की एक उपज बताकर मानव के वास्तविक स्वरूप को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इस तरह भौतिकवाद का समर्थन करने के कारण यह नास्तिक और धर्मविरोधी सिद्धांत है।

जॉन डी.वी अपनी पुस्तक 'A Common Faith' में प्रकृतिवादी मानवतावाद का विचार दिया है। इसके अनुसार प्रकृति से सब कुछ निकलता है और प्रकृति में ही विलीन हो जाता है। यही प्राकृतिक सत्य है। प्रकृति स्वयंभू है तथा इसका संचालन इसके स्वनियमन से होता है। डी.वी विश्व में किसी दैवी सत्ता के नियंत्रण को न तो तर्कसंगत मानते हैं और न ही लाभदायक। उसका मत है – परंपरागत धर्म मनुष्यों में लड़ाई का कारण ही रहे हैं। किंतु, ऐसे धर्म से डी.वी इंकार नहीं करते, जो मानव को मानव से जोड़ता है, जो व्यक्ति का समाज से एकीकरण करता है तथा जो मानव को उसके वास्तविक स्वरूप का ज्ञान कराता है। "ड्यूवी के प्रकृतिवाद में परंपरागत धर्मों में निहित मूल्यों की पूर्ण सुरक्षा की गयी है। अंतर इतना ही है कि ड्यूवी प्रकाशन–श्रुति के स्थान पर रचनात्मक कल्पना की मदद लेते हैं, आदिदैविकता को त्याग कर प्रकृतिवाद को अपनाते हैं और अध्दिैविक मरणोत्तर जीवन से पराड्.मुख होकर ऐहिक जीवन को सुधारने का विचार देते हैं।"[7]

अमेरिकी दार्शनिक कॉर्लिस लामोन्ट ने 1949 में पहली बार प्रकाशित अपनी पुस्तक 'The Philosophy of Humanism' में मानवतावाद का प्रबल समर्थन किया है। लामोण्ट के अनुसार "मानवतावाद तर्कसंगत रूप से प्रकृतिवादी एवं विज्ञानवादी ही हो सकता है क्योंकि मानवतावाद के लिए प्रकृति ही एकमात्र सत्ता है जिसका मानव एक अभिन्न अंग है और जिसमें आदिदैविकता का लेशमात्र नहीं है।"[8] स्पष्टत: लोमॉण्ट के अनुसार मानवतावाद प्रकृतिवाद का समर्थन करता है। यह ईश्वर और मृत्यु के बाद जीव सहित सभी प्रकार के अतिप्रकृतिवाद को कोरी कल्पना मानता है। लोमॉण्ट कहते हैं कि मानव में इतनी क्षमता है कि वह साहस और दूरदृष्टि के साथ, मुख्यत: बुद्धि और वैज्ञानिक विधि की सहायता से, अपनी समस्याओं का समाधान कर सकता है। ये भाग्यवाद और नियतिवाद का विरोध करते हैं। लोमॉण्ट ने मानवतावाद के अंतर्गत लोकतंत्र को अत्यधिक महत्व दिया है।

5. वैज्ञानिक मानवतावाद

वैज्ञानिक मानवतावाद का प्रतिपादन नेहरू जी ने किया। नेहरू जी का वैज्ञानिक मानवतावाद उदार तथा समसामयिक संदेश है। नेहरू जी पारंपरिक धर्मों के विरोधी हैं। उनकी स्पष्ट मान्यता है कि पारंपरिक धर्मों ने मानवता की जितनी सेवा की है, उससे कहीं अधिक हानि भी की है। इसके उपरांत भी वे मानते हैं कि मानव जीवन की कुछ ऐसी आवश्यकताएँ हैं जिनकी पूर्ति विज्ञान नहीं धर्म ही कर सकता है। नेहरू ने वैज्ञानिक धर्म की अवधारणा प्रस्तुत की जिसका तात्पर्य है ऐसा धर्म जो वैज्ञानिक मनोवृत्ति (Scientific Temper) पर आधारित हो। यह धर्म विभिन्न धर्मों में मौजूद रूढ़िवादिता, अंधविश्वास और कट्टरता को स्वीकार नहीं करता बल्कि वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टिकोण

से धर्म के आंतरिक तत्वों पर बल देता है। नेहरू ने भी जॉन डीवी की तरह धर्मों के मूल तत्व को अपनाने की बात की है।

6. नव मानवतावाद

नव–मानवतावाद एम.एन. रॉय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत है। राय परंपरा से प्रचलित एवं अन्य तत्कालीन मानवतावादी विचारों से पृथक् मानवतावादी विचार प्रस्तुत करते हैं। इसीलिए, उनका मानवतावाद 'नव–मानवतावाद' कहलाता है। 'New Humanism and Radical Humanism' राय की यह प्रसिद्ध पुस्तक है, जिनमें 'मानवतावाद' की व्याख्या है।

राय के नव–मानवतावाद का आधार भौतिकवाद है। विज्ञान एवं इतिहास के गहन अध्ययन के आधार पर राय अपने दर्शन में मानव के कुछ नवीन मूल्यों की स्थापना करते हैं। जो इस प्रकार है (1) मानव एक प्राकृतिक प्राणी है। (2) मानव एक विवेकशील प्राणी है। (3) मानव एक शिक्षणीय प्राणी है। (4) मानव एक स्वतंत्र प्राणी है। (5) संसार की वस्तुएँ मानव के हित की दृष्टि से ही अच्छी या बुरी है। (6) मानव अमर आत्मा से रहित प्राणी है। (7) मानव स्वयं अपना भाग्य निर्माता है। "राय ऐसे किसी भी दर्शन को दर्शन मानने के लिए तैयार नहीं, जो किसी अलौकिक व अदृश्य की कल्पना पर आधारित हो और इस नाते मनुष्य की स्वतंत्रता में बाधक हो। एकमात्र भौतिक सत्ता ही मूल एवं प्राथमिक सत्ता है और उस पर आधारित जीवन ही सही अर्थों में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है।"[9] राय ईश्वर के अस्तित्व का खंडन करते हैं क्योंकि ईश्वर का विचार मनुष्य को अत्यंत कमजोर तथा ईश्वर पर निर्भर बना देता है। वैसे भी राय भौतिकवाद एवं प्रकृतिवाद का समर्थन करने के कारण ईश्वर को मनुष्य एवं जगत के स्रष्टा के रूप में अस्वीकार करते हैं।

मानवतावाद की एक लंबी परंपरा है। अनेक विचारकों ने अपने–अपने ढंग से मानवतावाद को परिभाषित करने का प्रयास किया है। मानवभार्तृत्व एवं विश्वबंधुत्व मानवतावाद का आदर्श है। बुद्ध के समान टैगोर को भी मानवतावाद का समर्थक माना जा सकता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'The Religion of Man' में कहा है : "My Religion is the Religion of Man in which the infinite is defined in humanity" अर्थात् मेरा धर्म मानवीय धर्म है जिसमें ईश्वर की व्याख्या मानवीय रूप में होती है।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि मानवतावाद की व्याख्या दो प्रकार से की जाती है – प्रथम हमारी हिंदू संस्कृति में राम व कृष्ण ईश्वर मानव के रूप में अवतरित होते हैं, उसी प्रकार ईसाई धर्म में 'ईश्वर' ईसा–मसीह के रूप में अवतरित हुए तथा मुस्लिम धर्म में 'अल्ला' मोहम्मद के रूप में। दूसरे प्रकार में मनुष्य को ही ईश्वर के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है जैसे बौद्ध और जैन आदि धर्मों में बुद्ध और महावीर की पूजा होता है हालांकि बुद्ध मूर्त्ति पूजा में विश्वास नहीं रखते थे।

यहाँ एक महत्व्पूर्ण प्रश्न सामने आता है कि क्या मानवतावाद को धर्म की संज्ञा दी जा सकती है? मानवतावाद, पारंपरिक अर्थ में धर्म नहीं है, क्योंकि यहाँ कोई अलौकिक शक्ति नहीं है। फिर भी इन्हें धर्म की श्रेणी में रखा जा सकता है, क्योंकि यह मनुष्य को एकता के सूत्र में बांधता है तथा मनुष्य के सर्वांगीण विकास की बात करता है। मानवतावाद में भी ईश्वरत्व किसी–न–किसी रूप में विद्यमान है। वह मनुष्य को ईश्वर की श्रेणी में प्रतिष्ठित कर उसमें समर्पण की भावना स्वीकार करता है। उदाहरणस्वरूप मुस्लिम धर्म में मुहम्मद को 'अल्ला' का पैगम्बर माना जाता है और 'बुद्ध' एवं 'महावीर' को साधारण मनुष्य से ऊपर मानकर सम्प्रभु मान लिया जाता है। विवेकानंद ने भी यही कहा है – 'Social Service is the best Religion.'

अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मानवतावाद प्राचीन होते हुए भी एक नवीन अवधारणा है। जिसके केन्द्र में स्वयं मानव है। इसका उद्देश्य है – व्यक्ति स्वावलंबी बने, अपनी मानवीय गरिमा के प्रति सचेत हो, अपनी नैतिक संवेदना के प्रति गर्व का अनुभव करे और इसमें भी विश्वास रखे कि अपने प्रयास द्वारा अपने भाग्य का निर्माण वह स्वयं कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ–सूची

1. धर्म–दर्शन की मूल समस्याएँ – वेद प्रकाश वर्मा, प्रकाशक : हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय पुनर्मुद्रण (अगस्त) 2009, पृ. 461–462.
2. धर्म–दर्शन : सामान्य एवं तुलनात्मक – डॉ रमेन्द्र, प्रकाशक : मोतीलाल बनारसीदास, पटना, प्रथम संस्करण–2006, पृ. 14
3. धर्म–दर्शन की मूल समस्याएँ – वेद प्रकाश वर्मा, प्रकाशक : हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय पुनर्मुद्रण (अगस्त) 2009, पृ.3.
4. पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय – डॉ. शोभा निगम, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली पंचम संस्करण : 2009, पृ.198.
5. धर्म दर्शन परिचय – डॉ. हृदयनारायण मिश्र, श्री द्वारका प्रसाद अग्रवाल, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद, नौवाँ संस्करण : 28 जनवरी 1993, बसंत पंचमी।
6. समकालीन भारतीय दर्शन के कुछ मानववादी चिंतक: तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन – डॉ (श्रीमती) प्रेमलता, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग : नई दिल्ली, भारत सरकार : 2001 पृ. 13.
7. तुलनात्मक धर्म–दर्शन – या. मसीह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पुनर्मुद्रण : दिल्ली 2008, पृ. 279.
8. तुलनात्मक धर्म–दर्शन – या. मसीह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पुनर्मुद्रण : दिल्ली 2008, पृ. 282.
9. समकालीन भारतीय दर्शन के कुछ मानववादी चिंतक : तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन – डॉ (श्रीमती) प्रेमलता, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग : नई दिल्ली: 2001 पृ. 104–105.

सहायक ग्रंथ–सूची

1. धर्म–दर्शन की मूल समस्याएँ – वेद प्रकाश वर्मा – हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली –2009.
2. धर्म–दर्शन : सामान्य एवं तुलनात्मक – डॉ रमेन्द्र– मोतीलाल बनारसीदास– पटना–2006.
3. पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय – डॉ. शोभा निगम, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली –2009.
4. धर्म दर्शन परिचय – डॉ. हृदयनारायण मिश्र एवं श्री द्वारका प्रसाद अग्रवाल– शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद – 1993.
5. समकालीन भारतीय दर्शन के कुछ मानववादी चिंतक: तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन – डॉ (श्रीमती) प्रेमलता, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली–2001.
6. तुलनात्मक धर्म–दर्शन – या. मसीह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली–2008.